केदारनाथ सिंह की कविताओं में प्रकृति प्रेम

ओम प्रकाश वत्स
शोधार्थी (हिन्दी विभाग)
तिलकामांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर

Article Info
Volume 5, Issue 4
Page Number : 19-23

Publication Issue :
July-August-2022

Article History
Accepted : 05 July 2022
Published : 30 July 2022

सारांश –

केदारनाथ सिंह जी ने काव्य और प्रकृति का अत्यंत ही सहज एवं आत्मीय संबंध स्थापित किया है। प्रकृति ने कवि की सर्जनात्मकता और संवेदनशीलता का तीव्र भाव मुखर एवं सजीव बनाया है। ये ग्रामीण परिवेश तथा स्वस्थ मानवीय संवेदना लेकर उठने वाले कवि हैं।

शब्दकुंजी –
सर्जनात्मकता – सृजन की योग्यता
संवेदनशीलता – अति संवेदनशील होने की अवस्था
तीक्ष्णता – पैनापन
समन्वित – समन्वय किया हुआ
दुपहरिया – दोपहर का समय
प्रभावाभिव्यंजना – विचारों को अभिव्यक्त करने की कला
सार्थकता – सार्थक होने का भाव
दुर्लभ – कठिन
अधिकाधिक – अधिक से अधिक (अत्यधिक)
रहस्यमय – रहस्य से भरा हुआ
भावानुभूति – भाव की अनुभूति?

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

परिचय –

केदारनाथ सिंह जी प्रकृति के गंध, रूप, रस व उसके सौंदर्य के अन्तर्गत जीवन की भावानुभूतियों को बिंबित–प्रतिबिम्बित करते चलते हैं। उनकी रचनाओं में आम के मंजरियों की खुशबू, आहत बादलों की जिजीविषा, ऋतुओं के अलग–अलग गीत की तीक्ष्णता सब समाहित है। कवि प्रकृति में मानवीय जीवन के अलगाव को तोड़कर समन्वित कर देते हैं। कवि प्रकृति और मानवीय संवेदना को एक साथ उजागर करते हैं। एक पीढ़ी जो चुपचाप सहती है, अगली पीढ़ी भी मौन होकर उसे स्वीकार करने के लिए विवश रहती है। इन चुप्पियों को कवि अपनी कविता के माध्यम से तोड़ते हुए दिखते हैं –

''संदेश वाहक मैं तुम्हारी चुप्पियों का हूँ
तुमने जो कहा नहीं
उस पर्वत शब्द को
अनंत तक गुंजा दूँगा''[1]

इस कविता में ग्रीष्म की दुपहरिया का चित्रण है। नीम की पत्तियों के झरने के साथ–साथ मन की उदासी बढ़ने लगी। कवि के मन पर ग्रीष्म की दुपहरिया का प्रभाव है। एक उत्तम कोटि की प्रभावाभिव्यंजना इसे कह सकते हैं। दिन के सुनसान प्रहर में जीवन की प्रगति कवि को रूक–सी गयी लगती है। दुपहरिया का थककर रूकना इस बात का सूचक है कि ठिठुरन की रातें बीत तो गयीं लेकिन दर्द वाले दिन आ गए।

कवि अपनी कविता में प्रकृति के ऐसे रूपों को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है जो मधुऋतु के आने के पूर्व प्रकृति में होने वाले विविध परिवर्तनों को सम्यक दृष्टि से उभारने का प्रयास करता है। उदाहरणस्वरूप यह पंक्ति द्रष्टव्य है–

''धूप चिड़चिड़ी, हवा वेहया
दिन मटमैला
मौसम पर रंग चढ़ा फागुनी,
शिशिर टूटते पत्तों में टूटा पलाश–वन पर ज्यों फैला
एक उदासी का नम, शोले चटक घूरते
जिसमें आसमानों से गूँजा हिया आएगा
कल बसंत मन के भावों के गीतकार सा
गा जाएगा सब का सब कुछ।''[2]

परिणाम एवं विश्लेषण

दरअसल यह पूर्वाभास है, शिशिर के टूटते मौसम पर फागूनी रंग के चढ़ने का। ऋतु परिवर्तन के प्रभाव में मन के भावों को गूँथकर व्यक्त करने की कला कवि को अच्छी तरह मालूम है। ऋतुओं का आगमण अपनी प्रकृति के अनुरूप मन से संतुलन कायम कर लेती है। कवि कहते हैं कि ग्रीष्म उदास है तो कहीं बसंत प्रसन्न है।

कवि अपनी सर्जना की सार्थकता और भिन्न–भिन्न प्रेरणाओं की तलाश प्रकृति के बीच से करते हैं। कवि बस प्रकृति के सौंदर्य को ही नहीं बल्कि प्रकृति के कहर को भी झेलते हैं। प्रकृति चित्रण करते समय उसकी दृष्टि सूक्ष्म संवेदना पर भी केन्द्रित होती है। गाँव का किसान बाढ़ से घिरकर घबराता नहीं है, वह चुपचाप प्रतीक्षा करता है पानी के घटने की। किसान के मन में किसी के प्रति कोई शिकायत नहीं रहती बल्कि नई परिस्थितियों से लड़ने की शक्ति उनमें बनी रहती है। कवि चिलम के छेद में बची हुई आग से इस ओर इशारा करते हैं –

''मगर पानी में घिरे हुए लोग
शिकायत नहीं करते
वो हर कीमत पर अपनी
चीलम के छेद में
कहीं–न–कहीं बचा रखते हैं
थोड़ी सी आग।''[3]

आज सुविधाओं के पीछे पड़कर हम अपनी सीमाओं का ध्यान रखना भूल गए हैं। प्रकृति का विनाश करने में हम इस कदर लगे हुए हैं कि आज हमारी प्रकृति हमारे ही हाथों सुरक्षित नहीं है। पशु–पक्षी सुरक्षित नहीं हैं। कवि को डर है कि कहीं हम अपने स्वार्थ के चक्कर में सारी प्रकृति को स्वाहा न कर दें। इस प्रकृति को संकट में डालते–डालते हम अपने अस्तित्व को ही समाप्त न कर दें। उदाहरण के लिए ये पंक्तियाँ देखी जा सकती है –

''पर मुझे एक और भी डर है
बाघ से भी ज्यादा चमकता हुआ
कि हाथ कहाँ होंगे
आँखें कहाँ होंगी जो पढ़ेगी किताबें
प्रेस कहाँ होंगे जो उन्हें छापेंगे
शहर कहाँ होंगे जहाँ ढालेंगे टाइप।''[4]

क्योंकि ये सब मनुष्य के अस्तित्व पर निर्भर करते हैं, जब इन्हें बनाने वाले हाथ नहीं रहेंगे, तब ये सब कहाँ? कवि इस संकट की ओर समाज को आगाह करते हैं।

केदारनाथ सिंह जी की कविता में प्रकृति का बहुत ही गहरा चित्रण देखने को मिलता है। केदारनाथ सिंह जी का प्रकृति से जुड़ाव और पर्यावरण के प्रति चिंता उनकी कविता में साफ देखने को मिलती है। जिस तरह से हमने जंगल साफ कर दिए हैं और जानवरों के घरों को अपना घर बनाकर बैठ गए हैं, ऐसे में जंगल का जानवर कहाँ जाएगा? ऐसे में वो भटकता हुआ शहर की ओर चला आता है।

प्रकृति के प्रेमी केदारनाथ सिंह जी प्रकृति में आने वाले संकट को लेकर काफी चिंतित हैं। प्राकृतिक तत्वों के अधिकाधिक शोषण से जो प्रकृति को क्षति पहुँची है, उसका मनुष्य के जीवन पर काफी गहरा प्रभाव पड़ा है। आज मनुष्य अपनी आवश्यकता की पूर्ति एवं पूजीवाद के प्रसार में प्रकृति के साथ खिलवाड़ किया है। केदारनाथ सिंह जी अपनी कविताओं के माध्यम से समाज के बीच प्रकृति संबंधी प्रश्न बार–बार उठाते हैं। केदारनाथ सिंह जी ने अपनी कविता संग्रह 'यहाँ से देखो', 'बाघ', 'अकाल में सारस' आदि में प्रकृति में होने वाले भयानक संकट से साक्षात्कार करवाया है।

'पानी की प्रार्थना' शीर्षक कविता में केदारनाथ सिंह जी ने दिखाया है कि कैसे पानी पूरी सिद्दत के साथ प्रभु के सामने एक दिन का हिसाब लेकर खड़ा होता है और उस एक दिन के हिसाब में पूरे पूंजीवादी सत्ता तंत्र की पोल खोलकर रख देता है। इसे हम इस पंक्ति के माध्यम से देख सकते हैं –

"पर यहाँ पृथ्वी पर मैं
यानी आपका मुँह लगा पानी
अब दुर्लभ होने के कगार तक
पहुँच चुका हूँ पर चिंता की कोई बात नहीं
यह बाजारों का समय है
और वहाँ किसी रहस्यमय स्रोत में मैं हमेशा मौजूद हूँ।"

केदारनाथ सिंह जी को प्रकृति से बहुत ही लगाव था, ऐसा उनके कविताओं में साफ देखने को मिलता है। जब भी कोई विचित्र या अनोखा बिंब उन्हें दिखाई देता तो वे उसे झट से कविताबद्ध कर देते थे। 'अकाल में सारस' नामक कविता संग्रह में संकलित यह हिंदी कविता 'एक मुकुट की तरह' भी है। इनकी कविताओं में नदी, नाले, फूल, जंगल, सरसों के खेत, धानों के बच्चे, बसंत, कोयल की कूक, चिड़िया, घास, फुनगी, पूरवा–पछवा हवा आदि सभी देखने को मिलती है। 'सृष्टि पर पहरा' शीर्षक कविता में इन्होंने इनका वर्णन इस प्रकार किया है –

"आदमी के जनतंत्र में
घास के सवाल पर

होनी चाहिए लंबी एक अखण्ड बहस
पर जब तक वह न हो
शुरुआत के तौर पर मैं घोषित करता हूँ
कि अगले चुनाव में
मैं घास के पक्ष में मतदान करुगा
कोई चुने या न चुने
एक छोटी सी पत्ती का बैनर उठाए
हुए वह तो हमेशा मैदान में है
कभी भी . . . . .
कहीं भी उग आने की
एक जिद है वह।"

निष्कर्ष –

केदारनाथ सिंह जी ने अपनी कविताओं में प्रकृति के बारे में लिखा है पर प्रकृति उनके यहाँ वनस्पति नामों की आरोपित ध्वनि नहीं है। प्रकृति लिखते–लिखते कब वे मनुष्य लिखने लगते हैं, पता ही नहीं चलता। वे लिखना पहाड़ पर शुरु करते हैं और लिखा जाने लगता है श्रमिक। इसी तरह उन्होंने किसान और बैल आदि पर भी लिख है। बैल लिखते–लिखते कब वे किसान, जमीन, वर्षा, प्रदूषण आदि समस्याओं को उजागर करने लगते हैं, पता ही नहीं चलता है।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि कवि केदारनाथ सिंह जी अपनी सर्जना की सार्थकता और भिन्न–भिन्न प्रेरणाओं की तलाश प्रकृति के बीच से ही करते हैं। प्रकृति चित्रण करते समय उनकी दृष्टि सूक्ष्म संवेदनाओं पर भी केन्द्रित होती है।

संदर्भ सूची –

1. विश्वम्भर मानव, डॉ. रामकिशोर शर्मा, आधुनिक कवि, पृष्ठ – 314
2. अज्ञेय सम्पादन तीसरा सप्तक, पृष्ठ – 124
3. विश्वम्भर मानव, डॉ. रामकिशोर शर्मा, पृष्ठ – 318
4. बाघ, सिंह केदारनाथ